Vol. XII
Number-5

ISSN 2319-7129
(Special Issue) April, 2018

UGC Notification No. 62981

EDU WORLD

A Multidisciplinary International
Peer Reviewed/Refereed Journal

APH PUBLISHING CORPORATION

Scanned by CamScanner

ISSN : 2319-7129

EDU WORLD

A Multidisciplinary International Peer Reviewed/Refereed Journal

Vol. XII, Number - 5 April, 2018

(*Special Issue*)

Chief Editor

Dr. S. Sabu

Principal, St. Gregorios Teachers' Training College, Meenangadi P.O., Wayanad District, Kerala-673591. E-mail: drssbkm@gmail.com

Co-Editor

S. B. Nangia

A.P.H. Publishing Corporation

4435–36/7, Ansari Road, Darya Ganj,
New Delhi-110002

Scanned by CamScanner

CONTENTS

Accessibility of Mobile Telephony for Health of Rural Women 1
Dr. Parveen Pannu and Ms. Neha Yadav

Women Empowerment and Government Policies: A Study of Sarukhetri and Paka Betbari Development Block of Barpeta District of Assam 8
Pankaj Kalit

Legislative History of Co-Operative Sector in India- An Evaluation with Special Reference to Kerala State 17
Dr. Shacheendran V.

Selection and Formulation of Research Problem : It's Importance in Research 22
Dr. Dalpat Singh

Land Tenure Systems and the Formulation of Viruthi in Travancore 29
Dr. A. Balakrishnan

Inclusive Early Childhood Education in India: Are We Ready? 36
Dr. Geeta Chopra

Effect of Plyometric Exercises on Leg Power Among the Kho-Kho Players 42
Dr. Biju Sukumar

Effect of Plyometric Exercises on Explosive Power Among the Kho-Kho Players 46
Dr. Biju Sukumar

Human Migration in the Era of Globalization 50
Mukesh Devi

Commercial Surrogacy Risks Exploitation of Women in India 58
Dr. Munesh Kumar

The Issues and Constraints in Implementation of Reservation Policy and Ineffective Functioning of PRIs in India - An Overview 65
L. Thirupathi

Humane & Divine Aspects in the Treatments of Ayurveda 70
Dr. V. K. Bhavani

Mindfulness as a Strategy for Maintaining Mental Health on the Face of Violence 74
Dr. Neelu Verma

Scanned by CamScanner

Social Capital and Social Resurgence Among the Muslims of Kerala 82
Shajeer S.

Michelle Cohen Corasanti's the Almond Tree as a Tale of Incarceration and Deracination 90
Nargees M. K.

Exploring the Paradigms of Gender and Sexuality in the Sitcom Friends 94
Meera Hari

Privacy Rights of the People Living with HIV/ AIDS (PLWA) in India: Issues and Challenges 101
Rajagopal P.K.

Good Governance: Some Key Concepts in a Developing State 108
Dr. Richa Sharma

गंगा मैया में वर्ग संघर्ष का चित्रण 113
डॉ. राधामणि सी.

भारतीय राजनीतिक परिवेश में भाषण व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार 119
शिम्पी पांडे और रौशन ठाकुर

आदिवासी कविताओं में आदिवासी स्त्री जीवन की पीड़ा 124
डॉ. हेमन्त पाल घृतलहरे

Religious Contestations in Purvanchal/Purab Christian Missionary Activities from Allahabad to Patna up to C. 1860 138
Farha Khan

Slavery in Ancient Rome: Recent Reflections 149
Dr. Rakesh Kumar

Media Freedom and Right to Information-Two Corollary Rights in a Democracy 154
Preetha U.

Challenges for Library Professionals in India in the New Millennium 161
Patel Priyanka Sitarambhai

Trajectories of Marxism in International Relations 163
Riju Saimon

Role of Advertising in the Global Economy 174
Dr. Manoj Kumar Singh

Scanned by CamScanner

आदिवासी कविताओं में आदिवासी स्त्री जीवन की पीड़ा

डॉ. हेमन्त पाल घृतलहरे*

प्रस्तावना

जनजातीय सभ्यता दुनिया की आदिम (प्राचीन) सभ्यताएँ मानी जाती हैं और आदिवासी आदिम समाज का हिस्सा हैं। प्राचीन होते हुए भी वे शहरी सभ्यता–संस्कृति, आधुनिकता, उत्तर आधुनिकता से दूर अपने सरल, सहज नैसर्गिक जीवन मूल्यों, प्रकृति और प्राकृतिक उपादानों के साथ स्त्री–पुरूष के सह जीवन सहचरी प्रवृत्ति के पोषक रहे हैं। वे कलत तराजू और तलवार से प्रायः दूर रहे हैं पर वक्त आने पर उलगुलान के लिए तैयार रहते हैं। जनजातीय पुरूष और स्त्रियों के बीच दूरी या असमानता तुलनात्मक रूप से अत्यंत कम है, पर पुरूष प्रधान समाज की सत्तात्मक पहुँच वहाँ भी है, वहाँ अन्य दूसरी समस्याएँ हैं। आदिवासी स्त्री शहर की आधुनिक स्त्री की भाँति चरित्रहीनता लबल चिपकाई नहीं दिखाई देती, न वह गाँव की घूँघट की आड़ में दम तोड़ती दिखाई देती है, बल्कि वह समाज द्वारा टोनही की प्रताड़ना और गैर समाज द्वारा दैहिक वस्तुकरण की अमानवीय पीड़ाओं से गुजरती है। उनके पंचायत और दण्ड उनकी सीमाओं को निर्धारित करते हैं। मालिकाना हक की समस्याएँ अलग ढंग से ही सही पर वहाँ भी स्त्री के समक्ष चुनौतीपूर्ण ढंग से खड़ा है। जंगल में चौपाये जानवरों से उसे खतरा है, पर दो पाये जानवर उनके लिए ज्यादा घातक हैं। आज आदिवासी पुरूष और स्त्री दोनों ने कुदाल के साथ कलम भी उठा लिया है और वे अपने आदिवासी और आदिवासी स्त्री होने की पीड़ा को विनम्र आक्रोश के साथ अभिव्यक्ति दे रहे हैं। आदिवासी कविताओं में आदिवासी स्त्री जीवन की समस्याएँ प्रमुखता से चित्रित हो रही हैं।

बीज शब्द – माँ, बोतल, दारू, मुर्गे, कुत्ते, भेड़िए, मांदर, साजिश, मुण्डा, बाघ, चानर–बानर, हक, देवता, डायन, माटी, जंगल।

आदिवासी कविताओं आदिवासी स्त्री जीवन की पीड़ा

सुमित्रनंदन पंत ने लिखा है

वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान
उमड़कर आँखों से चुपचाप, बही होगी कविता अनजान

अर्थात पीड़ा, वेदना और गहन अनुभूतियों से कविता का जन्म होता है। आदिवासी कविताओं का जन्म भी शायद इन्हीं पीड़ाओं से हुआ है। यह पीड़ा की अभिव्यक्ति विध्वंसात्मक तो बिल्कुल नहीं है बल्कि सृजनात्मक और लोकमंगल की भावना भरी हुई है। धूमिल ने कहा है कि कविता भाषा में आदमी होने की तमीज है। आदिवासी कविताएँ यह बताती है कि सभ्यता से दूर जंगली कहे जाने वाले आदिवासी आदमियता के शिखर

*सहायक प्राध्यापक हिन्दी (प्रवर श्रेणी), शास. महाविद्यालय सनावल जिला-बलरामपुर, (छत्तीसगढ़)।

Scanned by CamScanner

पर हैं और सहज सभ्यता नैसर्गिक जीवन के साथ ही उनमें गहरा आत्मबोध, आत्मबल और आत्मचिंतन दिखाई देता है।

बीसवीं सदी में पूरा विश्व नारीवादी चिंतन और विचारों से आंदोलित हुआ है। वैश्विक नारीवादी आंदोलन की प्रमुख हिस्सेदार पेरिस में 9 जनवरी 1908 को जन्मी सिमोन द बोउवार की बहुचर्चित किताब 'द सेकंड सेक्स' ने स्त्री के सम्बन्ध में बहुत नयी और मौलिक धारणाओं को जन्म दिया तथा बहस के नये मुद्दे दिये। इसमें सिमोन कहती है कि औरत पैदा नहीं होती है, बल्कि बनाई जाती है, अर्थात् समाज औरत को गढ़ता है। उनका मानना है कि हमारा धर्म, संस्कृति व समाज लड़कियों को 'स्त्री' बनने के लिए मजबूर करता है। सिमोन कहती है कि महिलाओं और पुरूषों के बीच जो जैविक अंतर है उसके आधार पर महिलाओं को दबाना बहुत ही अन्यायपूर्ण और अनैतिक है।

स्त्री जीवन की पीड़ा को समझने के लिए पुरूषवादी सोच को जानना जरूरी है। तसलीमा नसरीन की कविता को देखें –

"यह अच्छी तरह याद रखना,
जब तुम घर की चौखट लाँघोगी,
लोग तुम्हें टेढ़ी–मेढ़ी नजरों से देखेंगे
जब तुम गली से होकर गुजरोगी,
लोग तुम्हारा पीछा करेंगे, सीटी बजाएंगे,
जब तुम गली पार करके मुख्य सड़क पर पहुँचोगी
लोग तुम्हें चरित्रहीन कहकर गालियाँ देंगे।
तुम व्यर्थ हो जाओगी, अगर पीछे लौटोगी,
वरना जैसी जा रही हो, जाओं।" (1)

प्रायः आदिवासी समाज सामूहिकता और समानता का पक्षधर है वहाँ लैंगिक असमानता, भ्रूण हत्या या बेटे–बेटियों में भेदभाव प्रायः देखने को नहीं मिलते। वहाँ घोटुल, धूमकुड़िया आदि संस्कृति के माध्यम से लड़कियों को अपने वर चुनने की आजादी है। आदिवासी संस्कृति उन्हें इस बात की भी इजाजत देती है कि जरूरत पड़ने पर पुनर्विवाह, विधवा विवाह भी आसानी से किये जा सकते हैं। पर कुछ कड़े सामाजिक नियम भी हैं और वर्जनाएँ भी जो स्त्री को उसके अधिकारों से वंचित करते हैं, खासकर भूमि एवं सम्पत्ति के मामलों में।

आदिवासी समाज की अर्थव्यवस्था का आधार प्रकृति अथवा जंगल है। ये जंगल से तेंदूपत्ता, महुआ, कंद–मूल, फल–फूल इकट्ठा करते हैं, जंगली जानवरों का शिकार, मछली पकड़ना, गाय, भैंस, बकरी चराना, एक ही स्थान पर एवं स्थान बदल–बदलकर खेती करना, बाँस की टोकरी, सूपा बनाना, छिन की चटाई, झाड़ू बनाना, जंगल से प्राप्त लकड़ी, गोंद, लाख, हर्रा एवं जड़ी–बूटियों को बाजार में बेचना, खेतों, कारखानों और खदानों में श्रमिक के रूप में काम करना आदि इनके आर्थिक कार्य हैं। (2) इन सभी कार्यों में पुरूष की तुलना में स्त्री की भूमिका अधिक है अर्थात अर्थ उपार्जन की दृष्टि से स्त्री बहुत महत्वपूर्ण है। इसके अलावा हस्तशिल्प और कलात्मक वस्तुओं के निर्माण, सजावटी वस्तुओं के निर्माण में भी स्त्रियों की भूमिका प्रमुख है। अधिकांश स्त्रियाँ मजदूरी करती हैं या सम्पन्न घरों में काम करती हैं।

Scanned by CamScanner

आदिवासी समाजों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है – मातृसत्त प्रधान आदिवासी समाज और पितृसत्ता प्रधान आदिवासी समाज। सम्पत्ति पर अधिकार और उत्तराधिकार संबंधी मामलों में आदिवासी स्त्रियाँ पुराने नियमों को चुनौती दे रही हैं। आज भी संथाल, मुंडा, उरांव, खड़िया आदि जनजातियों में स्त्रियाँ को पिता की सम्पत्ति पर कोई अधिकार नहीं मिला है। आज भी उनके लिए हल चलाना, घर का छप्पर छाना, धनुष छूना आदि वर्जित है तथा इसके उल्लंघन पर कठोर दंड का प्रावधान है। (3) सम्पत्ति में हिस्से का अधिकार न होने के कारण परित्यक्ता या विधवा होने पर उन्हें डायन कहकर अपमानित और प्रताड़ित किया जाता है, यहाँ तक कि उनकी व उनके मासूम संतानों की हत्या तक कर दी जाती है ताकि जीवन भर उनका भरण पोषण न करना पडे। (4)

प्रमुख संताली आदिवासी कवयित्री निर्मला, पुतुल सवाल खड़े करती है –

क्या तुम जानते हो
पुरूष से भिन्न
एक स्त्री का एकान्त?
घर प्रेम और जाति से अलग
एक स्त्री को उसकी अपनी जमीन
के बारे में बता सकते हो तुम?

वह स्त्री के स्वतंत्र व्यक्तित्व को तलाशती हैं, उसके अस्तित्व को ढूंढती हैं –

तन के भूगोल से परे
एक स्त्री के
मन की गाँठें खोलकर
कभी पढ़ा है तुमने
उसके भीतर का खौलता इतिहास?

स्त्री केवल देह नहीं है। आदिवासी कविता स्त्री के वस्तुकरण के बाजार में स्त्री के व्यक्तिकरण पर ध्यान देती है। निर्मला पुतुल प्रश्न खड़े करती हैं पुरूष सत्ता से –

डसके अंदर वंशबीज बोते
क्या तुमने कभी महसूसा है
डसकी फैलती जड़ों को अपने भीतर?

ऐसा सीधा सटीक ज्वलन्त प्रश्न तो बड़े–बड़े नारीवादी जो वैष्विक पटल पर छाये हैं, वे भी नहीं पूछ पाते। आदिवासी कविता बड़ी मजबूती से सवाल उठाती है और पुरूष सत्ता को कठघरे में खड़ा करती है –

अगर नहीं!
तो फिर जानते क्या हो तुम
रसोई और बिस्तर के गणित से परे
एक स्त्री के बारे में ...?

निर्मला पुतुल स्त्री के जीवन संघर्ष को चित्रित करते हुए 'माँ' नामक कविता में बताती हैं कि वह रात–दिन काम में ही लगी रहती है पर उसके श्रम और संघर्ष को कोई ध्यान नहीं देता। माँ के श्रम की ओर ध्यानाकर्षित करती हैं ये पंक्तियाँ –

Scanned by CamScanner

"लेकिन घड़ी का चलना–रूकना
कुछ भी बजना न बजना
कोई मायने नहीं माँ के लिए
उसे तो बस चलना ही चलना
दिन में जगते
और रात ऊँघते हुए बस चलना ही चलना
डरती हूँ इसी तहर
चलती रही माँ
और बझे रहे हम अपने खेल में
तो हमसे कहीं दूर न चली जाए माँ!" (5)

एक आदिवासी स्त्री किस कदर जमाने से जूझते हुए अपने बच्चों का पालन पोषण करती है, यह अनुज लुगुन की कविता 'मेरी माँ, मैं और भेड़िए' की इन पंक्तियों से समझा जा सकता है –

कि जब जंगल में भेड़ियों से घिरे हों उनके बच्चे
तो उनकी माँ को क्या करना चाहिए
और माँ ने वही किया
जो एक माँ को करना चाहिए
वह भूमिगत हुए, वारंट निकले
लेकिन उसने समर्पण नहीं किया
X X X
माँ ऐसी ही होती है
वह न खुद बिकती है न अपने बच्चों को बिकने देती है
न ही खेत, खलिहान और जंगलों को बिकने देती है

आदिवासी स्त्री घर, परिवार, खेत, खलिहान, जल, जंगल सबकी सुरक्षा करती है, उसका मातृत्व व श्रम एकांगी नहीं है, पर उसके इस आयाम पर जनदृष्टि कम ही है। आदिवासी स्त्री जंगल में भी, समाज में भी भेड़ियों से घिरी हुई है। इन भेड़ियों से अपनी रक्षा कर लेना उसके जीवन की सबसे बड़ी चुनौती है। वे अपने घर पर भी सुरक्षित नहीं हैं। वंशी माहेश्वरी की कविता की निम्न पंक्तियाँ इन भावों को प्रमुखता से स्वर देती हैं –

वे स्त्रियाँ
अपने ही घरों में
निर्वासित
जमीन से बेदखल होती
टूटते आकाश को
असहाय वृद्ध पेड़ की
बीहड़ चिंताओं में गिरते देख रही हैं

Scanned by CamScanner

जिसमें उम्मीद के बादल
गुँथे थे

आदिवासी औरतें क्रांतिकारी भी हैं वे उलगुलान करना भी जानती हैं अनुज लुगुन की कविता 'उलगुलान की औरतें' की पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं –

उन्होंने अपने जूड़ों में
खोंस, रखा है साहस का फूल
कानों में उम्मीद को
बालियों की तरह पिरोया है
धरती को सिर पर
घड़े की तरह ढोई
लचकते हुए जा रही हैं
उलगुलान की औरतें
धरती से प्यार करने वालों के लिए
उतनी ही खूबसूरत
और उतनी ही खतरनाक
धरती के दुश्मनों के लिए।

आदिवासी स्त्री का संघर्ष सर्वत्र जारी है – वह आदिवासी अस्मिता, जल, जंगल, जमीन के लिए दुश्मनों से लड़ती है, फिर अपने हक अधिकार के लिए अपनों से लड़ती है। जिन्हें वह अपनी बिरादरी या अपने सहोदर समझती है वे भी उसके दुश्मन हैं। अनुज लुगुन उनसे सावधान रहने की बात करते हैं –

"देखो ... देखो!
वहाँ जो केन्द्र में बैठा है
वह तुम्हारा ही तो भाई है
जो तुम्हारे ही
अधिकार और पहचान की बात करता है
देखो, उसका रूप बदल रहा है
X X X
वह आदमी है लेकिन बाघ हो रहा है
वह चानर–बानर है, वह उलटबग्घा है
वह कुनुईल है" (6)

आदिवासी स्त्री बाहरी शोषण का शिकार तो पहले से रही है, अ बवह अपनों के शोषण का शिकार भी हो रही है। आदिवासी समाज में ऐसे दलाल अपनों का रूप धर के भीड़ में घुस जा रहे हैं जिससे आंतरिक खतरे बढ़ गए हैं, इनसे सुरक्षित बच पाना भी आदिवासी स्त्री के लिए चुनौतीपूर्ण कार्य है। अनुज लुगुन लिखते हैं –

"उस दिन जब

Scanned by CamScanner

सुगना मुण्डा की बेटी ने
उनकी वासनामयी
दैहिक माँग को खारिज कर दिया
तो वे 'चानर–बानर' बन कर
उसके समाज के अन्दर ही घुस आए'' (7)

अभी तो आदिवासी स्त्री वाहर के दुश्मनों की पहचान ही नहीं कर पाई थी और अब अपने बीच के अदृश्य शत्रुओं की पहचान कैसे करे और उनसे कैसे बचे यह अत्यंत चुनौतीपूर्ण कार्य है। आदिवासी समाज के शोषकों को पुरूष सत्ता के रूप में चिन्हांकित करते हुए हिंसात्मक गतिविधियों के लिए उन्हें जिम्मेदार ठहराया गया है। इस दिशा में अनुज लुगुन की ये पंक्तियाँ बहुत महत्वपूर्ण हैं –

''यहाँ जो आदमखोर पहुँचा है
वह जानवर है
जानवर नर है, पुरूष है, पुल्लिंग है
पितृसत्ता का प्रवक्ता
सेना, पुलिस, व्यवस्था का स्वरूप
कितनी ही युवतियाँ थीं
जो शिकार बनायी गयीं
X X X
इतना सैन्य संगठित है वह
कि स्त्री के गुप्तांगों तक में
ठोंकता है अपनी सत्ता
इतना चालाक है कि
वह स्त्रीलिंगों का करता है
पुल्लिंग रूपान्तरण'' (8)

आदिवासी कविताएँ शोषण, अन्याय, स्त्री शोषण एवं पितृसत्तात्मक व्यवस्था (असमानता) के प्रबल विरोध में मुखरित हैं, उनके तर्क लाजवाब हैं और वे व्यवस्था परिवर्तन के पक्षधर हैं।

आदिवासी समाज को नशे में इस कदर धकेल दिया गया है कि पुरूष वर्ग शराब पी–पीकर नशे में चूर रहता है कर्ज से दब जाता है और उधर घर की स्त्रियाँ घर चलाने के लिए दिन–रात खटती रहती हैं। गरीबी बहुत बड़ी समस्या है। इसी का फायदा कुछ दलाल किस्म के लोग उठाते हैं, यहाँ तक कि खून के रिश्ते भी बेटियों का सौदा कर डालते हैं। आदिवासी स्त्रियाँ बड़े पैमाने पर गरीब ग्रामीण अंचलों से गायब हो जाती हैं, वे शहरों में काम दिलाने के बहाने बेच दी जाती हैं अथवा देह–व्यापार के धंधे में धकेल दी जाती हैं। गाँव का मुखिया, घर मुखिया आदि भी नशे की लत से लाचार होकर ऐसे कदम उठा लेते हैं। निर्मला पुतुल की कविता 'सबसे डरावनी रात' उस भयानक दृश्य को चित्रित करती है जिसमें खुद की माँ बोतल भर दारू और एक मुर्गे के लिए अपनी बेटी का सौदा कर लेती है, उस बेटी की पीड़ा इन पंक्तियों में दर्ज है –

Scanned by CamScanner

"कैसे भुला दूँ उस रात की दास्ता
कि कोई और नहीं
जन्म देने वाली माँ तुमने
जिसने मुझे नौ महीने अपनी कोख में पाला
प्रसव पीड़ी सहा, दुष्कर
और तुमने ही उस वहशी कुत्तों की रात में
मुझे एक भेड़िए के हवाले कर दिया
कैसे भूल जाऊँ व राक्षसी रात
जिसमें दुनिया की सारी संवेदनाएँ
मेरा सबसे ऊँचा विश्वास
पवित्र रिश्ते आस्था
सबकुछ लूट गया" (9)

बेटी के सवालों का कोई जवाब माँ के पास नहीं है। इसी तरह स्त्रियों का बलात्कार करने वाले और सौदा करने वाले पुरूषों से भी आदिवासी कविता सीधा–सीधा सवाल करती है –

"सीधे–सीधे पूछती हूँ तुमसे
रात के सन्नाटे में
क्या कभी काँपती नहीं है तुम्हारी रूह
क्या कुछ भी तुम्हें याद नहीं आती
सुनाई नहीं देती औरतों की हिचकियाँ
और मेरी चुप्पी
क्या तुम्हें सुनाई नहीं देती?" (10)

ये कविताएँ मर्म तक पहुँचती, झकझोरती, सार्थक सवाल करती और अपना मजबूत प्रभाव छोड़ती हैं।

टादिवासी समाज सीधा–सादा समाज है वह दुनिया के तिकड़म और षड़यंत्र को समझ नहीं पाता। अधिकांश पुरूष हंड़िया, महुआ, सल्फी के खुमारी में रहते हैं तो कुछ मांदर और बांसुरी में रमे रहते हैं इसका फायदा चालाक लोग उठाते हैं। यहाँ भी स्त्री ही शोषण का शिकार होती है। इसलिए स्त्री अब जागरूक हो गई और पति को झकझोरती हुई कहती है –

"कोई आया, कुछ उठा ले गया
तुम बाँसरी बजाते रहे
मैं चुप रही
X X X
इस बार मैं चुप नहीं रहूंगी
छीनकर तोड़ दूँगी तुम्हारी बाँसुरी
कि देखो कि इस बार

Scanned by CamScanner

वो मुझे उठाने आ रहे हैं'' (11)

आदिवासी समाज की बहुत सी लड़कियाँ मजबूरी या धोखे से देह व्यापार के रास्ते पर डाल दी गई है समाज ऐसी स्त्रियों को स्त्री नहीं कहता उसे वेश्या कहता है और उसका अपमान करता है। आदिवासी कविता स्त्री को वेश्या नहीं बल्कि स्त्री बनाये रखने के पक्ष में खड़ी है, उसका मानना है कि वेश्यावृत्ति पुरूष की देन है –

''पुरूष बनाता है स्त्री को वेश्या
वरना स्त्री वेश्या नहीं होती
वेश्या होने का मतलब
स्त्री होना नहीं है
और स्त्री होने का मतलब वेश्या होना नहीं है'' (12)

स्त्री पहले भी स्त्री है और बाद में भी स्त्री है। बलात्कार की घटना स्त्रियों के तन, मन, चेतन सबको तोड जाती है और आदिवासी स्त्रियाँ बहुतायता मात्रा में जंगलों में इसका शिकार होती हैं। कवयित्री जंगल और देवी–देवता को भी स्त्री शोषण के मूक दर्शक बने रहने के लिए कठघरे में खड़ा करती है–

''उस रोज
काली अँधेरी रात में
लिटीपाड़ा लबदा के घने जंगलों में
बलात्कारित हुई मेरी बहनें
और तुम सबके सब
जंगलों में बसते देवी–देवता
मुँह ढाँपकर सुनते रहे
उन सबका बलात्कारित होना'' (13)

जंगली इलाकों में आंतरिक सुरक्षा के नाम पर पूर जो फौजें तैनात की जाती हैं वे भी आदिवासियों के शोषण से नहीं चूकते रक्षक ही भक्षक बन जाते हैं। जसिंता केरकेट्टा इसी पीड़ा को अभिव्यक्ति देते हुए कहती हैं –

''साहेब
एक दिन
जंगल की कोई लड़की
कर देगी तुम्हारी व्याख्याओं को
अपने सच से नंगा
लिख देगी अपनी कविता में
कैसे तुम्हारे जंगल के रखवालों ने
'तलाशी' के नाम पर
खींचे उसके कपड़े
कैसे दरवाजे तोड़कर
घुस आती है

Scanned by CamScanner

तुम्हारी फौज उनके घरों में"

इसी तरह जंगल की स्त्री का शोषण कर और किसी बेगुनाह को गोली मारकर उसे माओवादी (नक्सली) करार देने का जो षड़यंत्र होता है, उसका पर्दाफाश करती हुई जसिंता केरकेट्टा लिखती हैं–

एक दिन शहर के चौकीदार
अपने मालिक का इशारा पाकर
पहाड़ पर आते हैं
और कई दिनों से भूखे खोजी कुत्ते की तरह
पहाड़ पर अकेली घूमती स्त्री को देख लार टपकाते हैं
स्त्रियों को मांस कर लोंधा समझने को अभिशप्त
ये जंगल की स्त्रियों के मांस पर टूट पड़ते हैं
और भोर उठकर पेड़ से शलप उतारने जा रहे
उनके प्रेमियों को गोली मार देते हैं
ये शहर लौटकर गर्व से चिल्लाते हैं
देखो, जंगल से हम माओवादी मारकर आते हैं

स्त्री घर–बाहर सब जगह पिस रही है पर उसकी पीड़ा कोई नहीं समझता। तथाकथित कवि–लेखक भी आदिवासी जीवन के बहाने उनकी वेदना के बजाय उनके तन–बदन का माँसल रूप चित्रित करते हैं यहाँ आदिवासी स्त्री की इमेज को वस्तुकरण और बाजारीकरण की दृष्टि से तैयार किया जा रहा है, जिस पर आदिवासी कविता को कड़ी आपत्ति है। हरिराम मीणा लिखते हैं –

"उतरो कवि
लड़की की पुष्ट जंघाओं के नीचे
देखो पैरों के तलुओं को
X X X
बंद कमरे की कृत्रिम रोशनी से परे
बाहर फैली कड़ी धूप में बैठकर
फिर से लिखना
उस आदिवासी लड़की पर कविता।"

–('लोकप्रिय आदिवासी कविताएँ' से उद्धृत)

आदिवासी स्त्रियाँ रोजी रोटी की तलाश में पलायन करती हैं और शोषण का शिकार होती हैं, उनकी दुविधापूर्ण स्थिति का चित्रण का निर्मला पुतुल की इन पंक्तियों में है –

"आदिवासी महिलाएँ जिनके पास भूख है,
भूख में दूर तक पसरी उबड़–खाबड़ धरती है सपने हैं
सपनों से दूर तक पीछा करती अधूरी इच्छाएँ हैं
जिसकी लिजलिजी दीवारों पर पाँव रखकर वे भागती हैं

Scanned by CamScanner

बेतहाशा, कभी पूरब तो कभी पश्यिम की ओर ..."

रोटी तो सबको चाहिए स्त्री हो या पुरूष, लेकिन रोटी कमाने के फेर में शोषण की चक्की में पिस जाती है आदिवासी स्त्री। इसी भागदौड़ और पुरूषसत्ता के चंगुल में फंसी स्त्री आज अपनी अस्मिता को तलाश रही है, वह जानना चाहती है कि वह कौन है, उसके होने का क्या अर्थ है, क्योंकि उसे व्यक्ति से वस्तु बना दिया गया है –

"धरती के इस छोर से उस छोर तक
मुट्ठी भर सवाल लिए मैं
दौड़ती–हाँफती–भागती
तलाश रही हूँ सदियों से निरंतर
अपनी जमीन, अपना घर
अपने होने का अर्थ।"

आदिवासी स्त्री अपने स्वतंत्र अस्तित्व यानी वजूद की तलाश में है। उनके मुक्ति के स्वर में आत्मबल उनका सहारा है। निर्मला पुतुल लिखती हैं –

"स्त्रियों को इतिहास में जगह नहीं मिली
इसलिए हम स्त्रियाँ लिखेंगी अपना इतिहास

X X X

हम खून से लिखेंगे अपना इतिहास
आँसू से नहीं ..." –(बेघर सपने, पृ. 74)

आज उनके हाथ में कलम है, और वे लिख रहीं है स्वयं को कागज के पन्नों पर स्वर्णिम अक्षर से। पुरूष ने उसके व्यक्तित्व को किस कदर चारदीवारी में कैद कर दिया है इसका वर्णन ग्रेस कुजुर की इन पंक्तियों में है –

"बोंसाई की तरह
ड्राइंग रूम में
कैद कर देते हो ...
ओह! कितना बौना है आदमी!" (14)

आदिवासी स्त्री रोटी कमाने की जुगत में कितना संघर्ष करती, ईंट भट्ठों में काम करती उसका जिक्र करते हुए ग्रेस कुजुर लिखती हैं –

"ईंटों के भट्ठों में
सीज गई जिनगी
रोटी की खोज में
कहाँ नहीं भागी
बाँहें हो गई कमान, सब अंगुलियाँ तीन
देखना बाकी है, कलम को तीर होने दो।" (15)

काम कर–करके सिर्फ हड्डियाँ शेष रह जाती हैं। आदिवासी स्त्रियाँ सतत श्रम में संलग्न रहती हैं पर उन्हें श्रम का उचित मूल्य भी नहीं मिल पाता और उसकी गरीबी कभी नहीं मिट पाती –

Scanned by CamScanner

"तुम्हारे हाथों बने पत्तल पर भरते हैं पेट हजारों
पर हजारों पत्तल भर नहीं पाते तुम्हारा पेट"

निर्मला पुतुल लिखती हैं कि उत्पादन करने वाली आदिवासी औरतें वस्तुओं के उपभोग के सुख से वंचित रह जाती हैं –

"कैसी विडम्बना है कि
जमीन पर बैठ बुनती हो चटाइयाँ
और पंखा बनाते टपकता है
तुम्हारे करयाये देह से टप ... टप ... पसीना ...।"

आदिवासी स्त्री जिनकी सुविधा के लिए श्रम करती है वही लोग उनका शोषण और तिरस्कार करते हैं, यह विषमता इन पंक्तियों में उद्धृत है –

"जिन घरों के लिए बनाती हो झाड़ू
उन्हीं से आते हैं कचरे तुम्हारी बस्तियों में"

बाहरी दुनिया के लोग नृत्य और संस्कृति की आड़ में आदिवासी जीवन में प्रवेश कर रहे हैं वहाँ भी स्त्रियों को सब्जबाग दिखाकर उनका शोषण एकमात्र लक्ष्य होता है –

"वे दबे पाँव आते हैं तुम्हारी संस्कृति में
वे तुम्हारे नृत्य की बड़ाई करते हैं
वे तुम्हारी आँखों की प्रशंसा में कसीदे पढ़ते हैं
वे कौन हैं ...?
सौदागर हैं वे ... समझों ... "

–(नगाड़े की तरह बजते शब्द / निर्मला पुतुल)

चालाक लोग आदिवासी पुरूषों को शराब पिलाकर नशे में धुत्त कर देते हैं और घर आते–जाते स्त्रियों से पहचान बढ़ाकर उनका शारीरिक उपभोग (यौन शोषण) करते हैं और पुरूष या तो अनभिज्ञ रहता है या फिर लाचार। कवयित्री इस पीड़ा को व्यक्त करते हुए सचेत कर रही है –

"देखो तुम्हारे ही आँगन में बैठ
तुम्हारे हाथों बना हंड़िया तुम्हे पिला–पिलाकर
कोई कर रहा तुम्हारी बहनों से ठिठोली
बीड़ी सुलगाने के बहाने बार–बार उठकर रसोई में जाते
उस आदमी की मंशा पहचानो चुड़का सोरेन
जो तुम्हारी औरत से गुपचुप बतियाते बात–बात में दाँत निपोर रहा है"

– (नगाड़े की तरह बजते शब्द)

आदिवासी लड़कियाँ बहलावे फुसलावे में आकर शोषण का शिकार होती है, झाँसा देकर उनका यौन शोषण कर लिया जाता है, वह ठगी का शिकार हो जाती हैं, गरीबी और अत्यधिक सीधापन इसके कारण हैं कुछ लोग लड़कियों को छोड़कर भाग जाते हैं तो कुछ भगा ले जाते हैं, यह भी आदिवासी स्त्री जीवन की बड़ी समस्या और पीड़ा है –

Scanned by CamScanner

"कहाँ गया वह परदेसी जो शादी का ढोंग रचाकर
तुम्हारे ही घर में तुम्हारी बहन के साथ
साल–दो–साल रहकर अचनाक गायब हो गया
उस दिलावर सिंह को मिलकर ढूंढो चुड़का सोरेन
जो तुम्हारी ही बस्ती की रीता कुजूर को
पढ़ाने लिखाने का सपना दिखाकर दिल्ली ले भागा"

–(नगाड़े की तहर बजते शब्द)

आदिवासी स्त्रियों में भी कुछ दलाल महिलाएँ पैदा हो गई हैं जो देह व्यापार करती हैं अथवा कमीशनखोरी के लालच में लड़कियों को शहर सप्लाई करने का काम करती हैं –

"और हाँ पहचानो!
अपने ही बीच की उस कई–कई ऊँची सैण्डिल वाली
स्टेला कुजूर को भी
जो तुम्हारी भोली–भाली बहनों की आँखों में
सुनहरी जिन्दगी का ख्वाब दिखाकर
दिल्ली की आया बनाने वाली फैक्टरियों में
कर रही है कच्चे माल की तरह सप्लाई"

–(नगाड़े की तहर बजते शब्द)

आदिवासी स्त्री बाहर से शोषित व प्रताड़ित है पर समाज में भी वह खुश नहीं है। यदि आदिवासी स्त्री हल चला देती है तो समाज की पगड़ी उछाल जाती है, उसे बैल बनाकर हल में जोता जाता है और खूंटे से बाँधकर भूसा खिलाया जाता है। यदि स्त्री छप्पर छाने (टपकती छत को मरम्मत) का काम करती है तो उसके साथ बलात्कार करके और नाक कान काटकर धक्के देकर घर से बाहर निकाल दिया जाता है। इ नुष को धूने पर भी पाबंदी है। यदि वह पिता की सम्पत्ति पर अधिकार माँगती है तो उसे डायन कहकर पंचायत में दंडित किया जाता है और कई प्रकरण में भरी पंचायत में उसे नंगी करके नचाया जाता है। इन अमानवीय, अनैतिक कार्यो से उसे कितनी पीड़ा होती होगी उसका अंदाजा भी लगा पाना कठिन है। निर्मला पुतुल लिखती हैं –

"हक की बात न करो मेरी बहन
मत माँगो पिता की सम्पत्ति पर अधिकार
जिक्र मत करो पत्थरों और जंगलों की अवैध कटाई का
X X X
भरी पंचायत में डायन करार कर दण्डित की जाओगी"

यही नहीं बल्कि पंचायत में वह न्यायसंगत दलीले भी नहीं दे सकती यदि बहस करेगी तो अपमान की पराकाष्ठा होगी इसलिए स्त्री की विवशता की स्थिति में उसे कवयित्री मौन रहने को कहती है कि सबकुछ चला गया पर इज्जत तो बची रहे –

Scanned by CamScanner

"इन गूंगे–बहरों की बस्ती में
किसे पुकार रही हो सजोनी किस्कू?
कहाँ लगा रही हो गुहार?
X X X
भरी पंचायत में सरेआम
नचा न दी जाओ नंगी 'पकलू मराण्डी' की तरह
बस रहने दो
कुछ मत कहो सजोनी किस्कू"

–(नगाड़े की तरह बजते शब्द)

आदिवासी कविता केवल पीड़ा का चित्रण ही नहीं करती अपितु संघर्ष करने की प्रेरणा भी देती है –

उठो कि अपने अँधेरे के खिलाफ उठो
उठो अपने पीछे चल रहीं साजिश के खिलाफ
उठो, कि तुम जहाँ तो वहाँ से उठो
जैसे तूफान से बवण्डर उठता है
उठती है जैसे राख में दबी चिन्गारी"

–(नगाड़े की तरह बजते शब्द)

ग्रेस कुजूर चुप्पी तोड़कर आवाज बुलंद करने को कहती है –

"चुप क्यों हो संगी?
कुछ तो कहो
पैरों के नीचे धरती के अंदर
कोयले के अंतस में छुपी
आग के बावजूद
इतनी ठण्डी क्यों है तुम्हारी देह?" – (प्रतीक्षा)

वही अनुज लुगुन आखिर दम तक संघर्ष करने की प्रेरणा देते हैं –

"ओ मेरी युद्धरत दोस्त
तुम कभी हारना मत
हम लड़ते हुए मारे जाएंगे
उन जंगली पगडंडियों में
उन चौराहों में, उन घाटों में
जहाँ जीवन सबसे अधिक संभव होगा"

प्रमुख चर्चित आदिवासी कवियों में महादेव टोप्पो, हरिराम मीणा, रामदयाल मुण्डा, लक्ष्मण टोपले, उषा किरण, भुजंग, मेश्राम, पाल लिंगदोह, निर्मला पुतुल, ग्रेस कुजूर, अनुज लुगून, वंदना टेटे, जसिंता केरकेट्टा आदि है जिन्होंने आदिवासी जीवन पर बहुत ठोस और सार्थक लेखन किया है।

Scanned by CamScanner

सारांश

आदिवासी कविता सृजनात्मकता के पक्ष में खड़ी है। इसकी रचना प्रक्रिया विमर्श की आँचा पर पककर वैचारिक यथार्थ के धरातल रखी जा रही महबूत नींव की ईंट है जिस पर इनका भविष्य टिकेगा। आदिवासी स्त्री के शोषण के प्रमुख आधार दो हैं -- एक तो वह आदिवासी है, अर्थात सामाजिक–आर्थिक रूप से वंचित वर्ग या हाशिए के समाज का जीवन जीने को बाध्य है, तथा उसकी सामाजिक प्रस्थिति निम्न जाति के रूप में चिन्हित है। इस प्रकार आदिवासी होना उसकी नियति है जिस पर वह स्त्री गर्व कर सकती है पर भारतीय समाज व्यवस्था के हिमायती उसे मनुष्य की गरिमा में स्थापित नहीं होने देंगे, वह उपेक्षिता ही रहेगी। दूसरी नियति यह कि वह जन्म से स्त्री है और इस कारण वह अपने आदिवासी समाज में भी दूसरे क्रम पर आती है और सामाज़िक नियमों का पालन करने को वह बाध्य है तथा समाज के पुरूषों के प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष भेदभाव व शोषण को स्त्री के रूप में सहते रहना उसकी नियति है। स्त्री होने के कारण वह प्रताड़ित व उपेक्षित है। आदिवासी स्त्री होने के नाते तथाकथित उच्च वर्ग के लोग उसे कभी भी उपयोग कर लेने व छोड़ देने वाली (लिखो–फेको) वस्तु समझते हैं तथा हवश, शोषण, सौदा, बलात्कार, छेड़खानी आदि अमानवीय व अपमानजनक स्थितियों से उसे गुजरना पड़ता है। पर आदिवासी कवि, चाहे वे पुरूष हों या स्त्री, बहुत जागरूक हैं और पूरी ताकत व तर्क के साथ प्रतिरोध व प्रतिकार का साहित्य लिख रहे हैं। आदिवासी कवि 'लोक' से जुड़े हैं इसलिए उनकी कविता में आक्रोश और विद्रोह के साथ संयम और आत्मबल है। आदिवासी कविताएँ किसी भी दृष्टि से मुख्यधारा की समकालीन कविताओं से कमतर नहीं हैं। इन कविताओं की गूंज दूर तलक हैं, तो उम्मीद की जानी चाहिए कि आदिवासी स्त्रियों का भविष्य इनसे संवर सकेगा।

सन्दर्भ सूची

1 कस्तवार, रेखा. स्त्री चिंतन की चुनौतियाँ, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, 2013 पृष्ठ 173–174
2 टाकभौरे, सुशीला. हाशिए का विमर्श, नेहा प्रकाशन दिल्ली, 2015 पृष्ठ 170–171
3 गुप्ता, रमणिका. स्त्री मुक्तिः संघर्ष और इतिहास, सामयिक प्रकाशन नई दिल्ली, 2014 पृष्ठ 157
4 वही, पृष्ठ 157
5 पुतुल, निर्मला. बेघर सपने, आधार प्रकाशन पंचकूला (हरियाणा), 2014 पृष्ठ 12
6 लुगुन, अनुज. बाघ और सुगना मुण्डा की बेटी, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, 2017 पृष्ठ 62
7 वही, पृष्ठ 34
8 वही, पृष्ठ 99–100
9 पुतुल, निर्मला. बेघर सपने, आधार प्रकाशन पंचकूला (हरियाणा), 2014 पृष्ठ 14
10 वही, पृष्ठ 16
11 वही, पृष्ठ 21
12 वही, पृष्ठ 24
13 वही, पृष्ठ 89
14 गुप्ता, रमणिका. स्त्री विमर्शः कलम और कुदाल के बहाने, शिल्पायन दिल्ली, 2010 पृष्ठ 96
15 वही, पृष्ठ 96
16 पुतुल, निर्मला. नगाड़े की तरह बजते हैं शब्द, भारतीय ज्ञानपीठ नई दिल्ली, 2004 पृष्ठ 96 से उद्धृत

Scanned by CamScanner